बिरसा मुंडा का उलगुलान ही मूलनिवासी दिवस का खंडन है

मूलनिवासी दिवस या इंडिजिनस पीपल डे एक भारत मे एक नया षडयंत्र है। सबसे बड़ी बात यह कि इस षडयंत्र को जिस जनजातीय समाज के विरुद्ध किया जा रहा है, उसी समाज के काँधों पर रखकर इसकी शोभायमान पालकी भी चतुराई पूर्वक निकाल ली जा रही है। वैश्विक दृष्टि से यदि देखा जाये तो जिस 9 अगस्त दिवस को जनजातीय समाज के नरसंहार दिवस के रूप मे स्मरण किया जाना चाहिए उसी दिवस को पश्चिमी शक्तियों द्वारा एक उत्सव के रूप मे स्थापित कर दिया गया है। संयुक्त राष्ट्र संघ के एक संगठन विश्व मजदूर संगठन ILO द्वारा "राइटस आफ इंडिजिनस पीपल" नाम से एक कन्वेन्शन जारी किया गया जिसे सम्पूर्ण विश्व के मात्र 22 उन देशों ने हस्ताक्षर किया जिनकी कहीं कहीं अत्याचार पूर्ण औपनिवेशिक कालोनियां थी। इन्हीं 22 देशों ने एक "वर्किंग ग्रूप फार इंडिजिनस पीपल" नामक संगठन बनाया जिसकी प्रथम बैठक 9 अगस्त 1982 को हुई और इसी दिन को बाद मे विश्व मूल निवासी दिवस या विश्व आदिवासी दिवस के रूप मे मनाया जाने लगा। भारत के तथाकथित सेकुलर बुद्धिजीवियों व वामपंथियों के सहयोग से विदेशियों की यह चाल इतनी सफल हुई कि बड़ी संख्या मे जनजातीय समाज इस वर्ल्ड इंडिजेनस डे यानि विश्व मूलनिवासी दिवस को आदिवासी दिवस के नाम से मनाने लगा। तथ्य यह है कि भारत मे जनजातीय समाज व अन्य जाति जिसे इन विघटनकारियों ने आर्य – अनार्य का वितंडा बना दिया, वैसी परिस्थितियाँ भारत मे है ही नहीं। कथित तौर पर आर्य कहे जाने वाले लोग भी भारत मे उतने ही प्राचीन हैं जितने कि जनजातीय समाज के लोग।

यह तो अब सर्वविदित है कि इस्लाम व ईसाइयत दोनों ही विस्तारवादी धर्म हैं व अपने विस्तार हेतु इन्होने अपने धर्म के परिष्कार, परिशोधन के स्थान पर षडयन्त्र, कुतर्क, कुचक्र व हिंसा का ही उपयोग किया है। अपने इसी लक्ष्य की पूर्ति हेतु पश्चिमी विद्वानों ने भारतीय जातियो मे विभेद उत्पन्न करना उत्पन्न किया व द्रविड़ों को भारत का मूलनिवासी व आर्यों को बाहरी आक्रमणकारी कहना प्रारंभ किया। ईसाइयों ने अपने धर्म की श्रेष्ठता सिद्ध करने हेतु इस प्रकार के षडयन्त्र रचना सतत चालू रखे। विदेशियों ने ही भारत के इतिहास लेखन मे इस बात को दुराशय पूर्वक बोया कि आर्य विदेश से आई हुई एक जाति थी जिसने भारत के मूलनिवासी द्रविड़ समाज की सभ्यता को आक्रमण करके पहले नष्ट भ्रष्ट किया व उन्हे अपना गुलाम बनाया। जबकि यथार्थ है कि आर्य किसी जाति का नहीं बल्कि एक उपाधि का नाम था जो कि किसी विशिष्ट व्यक्ति को उसकी विशिष्ट योग्यताओं, अध्ययन या सिद्धि हेतु

प्रदान की जाती थी। आर्य शब्द का सामान्य अर्थ होता है विशेष। पहले अंग्रेजों ने व स्वातंत्र्योत्तर काल मे अंग्रेजों द्वारा लादी गई शिक्षा पद्धति ने भारत मे लगभग छः दशकों तक इसी दूषित, अशुद्ध व दुराशयपूर्ण इतिहास का पठन पाठन चालू रखा।

भारत मे इसी दूषित शिक्षा पद्धति ने आर्यन इंवेजन थ्योरी की स्थापना की व सामाजिक विभेद के बीज लगातार बोये। जर्मनी मे जन्में किंतु संस्कृत के ज्ञान के कारण अंग्रेजों द्वारा भारत बुलाये गए मेक्समूलर ने आर्यन इन्वेजन थ्योरी का अविष्कार किया। मेक्समूलर ने लिखा कि आर्य एक सुसंस्कृत, शिक्षित, बड़े विस्तृत धर्म ग्रन्थों वाली, स्वयं की लिपि व भाषा वाली घुमंतू किंतु समृद्ध जाति थी। इस प्रकार मैक्समूलर ने आर्य इंवेजन थ्योरी के सफ़ेद झूठ का पौधा भारत मे बोया जिसे बाद मे अंग्रेजी शिक्षा पद्धति ने एक बड़ा वृक्ष बना दिया। यद्पि बाद मे 1921 मे हड़प्पा व मोहनजोदाड़ो सभ्यता मिलने के बाद आर्यन थ्योरी को बड़ा धक्का लगा किंतु अंग्रेजों ने अपनी शिक्षा पद्धति, झूठे इतिहास लेखन व षडचन्त्र के बल पर इस थ्योरी को जीवित रखा। सिंधु घाटी सभ्यता की श्रेष्ठता को छुपाने व आर्य द्रविड़ के मध्य विभाजन रेखा खींचने की यह कथा बहुत विस्तृत चली किंतु अभी हम मूलनिवासी दिवस तक ही सीमित रहते हैं।

यदि हम भारत के जनजातीय समाज व अन्य समाजों मे परस्पर एकरूपता की बात करें तो कई कई अकाट्य तथ्य सामने आते हैं। कथित तौर पर जिन्हे आर्य व द्रविड़ अलग अलग बताया गया उन दोनों का डीएनए परस्पर समान पाया गया है। दोनों ही शिव के उपासक हैं।
प्रसिद्ध एन्थ्रोपोलाजिस्ट वारियर एलविन, जो कि अंग्रेजों के एडवाइजर थे, ने जनजातीय समाज पर किए अध्ययन मे बताया था कि ये कथित आर्य और द्रविड़ शैविज़्म के ही एक भाग है और गोंडवाना के आराध्य शंभूशेक भगवान शंकर का ही रूप हैं। माता शबरी, निषादराज, सुग्रीव, अंगद, सुमेधा, जांबवंत, जटायु आदि आदि सभी जनजातीय बंधु भारत के शेष समाज के संग वैसे ही समरस थे जैसे दूध मे शक्कर समरस होती है। प्रमुख जनजाति गोंड व कोरकू भाषा का शब्द जोहारी रामचरितमानस के दोहा संख्या 320 में भी प्रयोग हुआ है। मेवाड़ में किया जाने वाला लोक नृत्य गवरी व वोरी भगवान शिव की देन है जो कि समूचे मेवाड़ी हिंदू समाज व जनजातीय समाज दोनों के द्वारा किया जाता है। बिरसा मुंडा, टंटया भील, रानी दुर्गावती, ठाकुर विश्वनाथ शाहदेव, अमर शहीद बुधू भगत, जतरा भगत, लाखो बोदरा, तेलंगा खड़िया, सरदार विष्णु गोंड आदि आदि कितने ही ऐसे वीर जनजातीय बंधुओं के नाम हैं जिनने अपना सर्वस्व भारत देश की संस्कृति व हिंदुत्व की रक्षा के लिये अर्पण कर दिया।

जब गजनी से विदेशी आक्रांता हिंदू आराध्य सोमनाथ पर आक्रमण कर रहा था तब अजमेर, नाडोल, सिद्ध पुर पाटन, और सोमनाथ के समूचे प्रभास क्षेत्र में हिंदू धर्म रक्षार्थ जनजातीय समाज ने एक व्यापक संघर्ष खड़ा कर दिया था। गौपालन व गौ सरंक्षण का संदेश बिरसा मुंडा जी ने भी समान रूप से दिया है। और तो आर क्रांतिसूर्य बिरसा मुंडा का "उलगुलान" संपूर्णतः हिंदुत्व आधारित ही है।

ईश्वर यानी सिंगबोंगा एक है, गौ की सेवा करो एवं समस्त प्राणियों के प्रति दया भाव रखो, अपने घर में तुलसी का पौधा लगाओ, ईसाइयों के मोह जाल में मत फंसो, परधर्म से अच्छा स्वधर्म है, अपनी संस्कृति, धर्म और पूर्वजों के प्रति अटूट श्रध्दा रखो, गुरुवार को भगवान सिंगबोंगा की आराधना करो व इस दिन हल मत चलाओ यह सब संदेश भगवान बिरसा मुंडा ने दिये हैं। वे जिन्हे आर्य कहा गया और वे

जिन्हे आर्य कहा गया दोनों ही वन, नदी, पेड़, पहाड़, भूमि, गाय, बैल, सर्प, नाग, सूर्य, अग्नि आदि की पूजा हजारों वर्षों से पूजा करते चले आ रहें हैं। भारत के सभी जनजातीय समुदाय जैसे गोंड, मुंडा, खड़िया, हो, किरात, बोडो, भील, कोरकू, डामोर, खासी, सहरिया, संथाल, बैगा, हलबा, कोलाम, मीणा, उरांव, लोहरा, परधान, बिरहोर, पारधी, आंध, टाकणकार, रेड्डी, टोडा, बडागा, कोंडा, कुरुम्बा, काडर, कन्निकर, कोया, किरात आदि आदि के जीवन यापन, संस्कृति, दैनंदिन जीवन, खानपान, पहनावे, परम्पराओं, प्रथाओं का मूलाधार हिंदुत्व ही है। अब ऐसी स्थिति मे भारत मे मूलनिवासी दिवस की अवधारणा का स्थान कहां रह जाता है ?

(विश्व संवाद केंद्र भोपाल द्वारा प्रेषित)